श्रीमद् भागवत का यह सार
भगवद् भक्ति ही आधार

श्रीमद्भागवत रसिक कुटुंब

गोपी गीत(भागवत मुखस्थ परीक्षा हेतु)

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

दशमः स्कंधः

अथैकत्रिंशोऽध्यायः

गोप्य ऊचुः

जयति तेऽधिकं(ञ्) जन्मना व्रजः(श्),
श्रयत इन्दिरा शश्वदत्र हि ।
दयित दृश्यतां(न्) दिक्षु तावकास्-
त्वयि धृतासवस्त्वां(वँ) विचिन्वते ॥ 1॥

गोप्यः ऊचुः—गोपियों ने कहा; जयति— जय हो; ते– तुम्हारी; अधिकम्– अधिक; जन्मना– जन्म से; व्रजः– व्रजभूमि; श्रयत—वास करती है; इन्दिरा– लक्ष्मीदेवी; शश्वत्— निरन्तर; अत्र– यहाँ; हि–निस्सन्देह; दयित—हे प्रिय; दृश्यताम्— देखे जा सकें; दिक्षु- सभी दिशाओं में; तावकाः- आपके; त्वयि- आपके लिए; धृत- धारण किये हुए; असवः- अपने प्राण; त्वाम्– तुमको; विचिन्वते- खोज रही हैं।

शरदुदाशये साधुजातसत्,
सरसिजोदरश्रीमुषा दृशा ।
सुरतनाथ तेऽशुल्कदासिका,
वरद निघ्नतो नेह किं(वँ) वधः ॥ 2॥

शरत्—शरद ऋतु का; उद-आशये– जलाशय में; साधु- उत्तम रीति से; जात– उगा; सत्– सुन्दर; सरसि-ज- कमल के फूलों के; उदर- मध्य में; श्री- सौन्दर्य; मुषा- अद्वितीय; दृशा– आपकी चितवन से; सुरत-नाथ- हे प्रेम के स्वामी; ते— तुम्हारी; अशुल्क- मुफ्त, बिना मूल्य की; दासिकाः- दासियाँ; वर-द- हे वरों के दाता; निघ्नतः- बध करने वाले; न- नहीं; इह — इस जगत में; किम्– क्यों; वधः– हत्या।

विषजलाप्ययाद् व्यालराक्षसाद्,
वर्षमारुताद् वैद्युतानलात् ।
वृषमयात्मजाद् विश्वतोभया-
दृषभ ते वयं(म्) रक्षिता मुहुः ॥ 3॥

विष—विषैला; जल—जल से; अप्ययात्— विनाश से; व्याल- भयानक; राक्षसात्– राक्षस से; वर्ष- वर्षा से; मारुतात्- तथा अंधड से; वैद्युत-अनलात्—वज्र से; वृष- बैल से; मय-आत्मजात्- मय के पुत्र से; विश्वतः– सभी; भयात्—भय से; ऋषभ- हे पुरुषों में श्रेष्ठ; ते– तुम्हारे द्वारा; वयम्– हम; रक्षिताः- रक्षा की जाती रही हैं; मुहुः- बारम्बार ।

न खलु गोपिकानन्दनो भवा-
नखिलदेहिनामन्तरात्मदृक् ।
विखनसार्थितो विश्वगुप्तये,
सख उदेयिवान् सात्वतां(ङ्) कुले ॥ 4॥

न–नहीं; खलु– निस्सन्देह; गोपिका– गोपी, यशोदा के; नन्दनः– पुत्र; भवान्– आप; अखिल– समस्त; देहिनाम्– देहधारी जीवों के; अन्तः-आत्म- अन्तःकरण का; दृक्— द्रष्टा; विखनसा- ब्रह्मा द्वारा; अर्थितः- प्रार्थना किये जाने पर; विश्व- विश्व की; गुप्तये- रक्षा के लिए; सखे– हे मित्र; उदेयिवान्- आपका उदय हुआ; सात्वताम्- सात्वतों के; कुले- कुल में।

विरचिताभयं(वँ) वृष्णिधुर्य ते,
चरणमीयुषां(म्) सं(म्)सृतेर्भयात् ।
करसरोरुहं(ङ्) कान्त कामदं(म्),
शिरसि धेहि नः(श्) श्रीकरग्रहम् ॥ 5॥

विरचित— उत्पन्न किया; अभयम्– अभय; वृष्णि- वृष्णि कुल का; धूर्य– हे श्रेष्ठ; ते– तुम्हारे; चरणम्– चरण; ईयुषाम्- निकट पहुँचने वालों के; संसृतेः- भौतिक जगत के; भयात्- भय से; कर— तुम्हारा हाथ; सरः-रुहम्- कमल के समान; कान्त—हे प्रेमी; काम- इच्छाएँ; दम्– पूरा करने वाला; शिरसि- सिरों पर; धेहि — रखो; नः– हमारे; श्री– लक्ष्मीदेवी के; कर—हाथ; ग्रहम्—पकड़ते हुए ।.

व्रजजनार्तिहन् वीर योषितां(न्),
निजजनस्मयध्वं(म्)सनस्मित ।
भज सखे भवत्किं(ङ्)करीः(स्) स्म नो,
जलरुहाननं(ञ्) चारु दर्शय ॥ 6॥

व्रज-जन-व्रज के लोगों के; आर्ति- कष्ट के; हन्– नष्ट करने वाले; वीर- हे वीर; योषिताम्— स्त्रियों के; निज— अपने; जन—लोगों का; स्मय- गर्व; ध्वंसन- विनष्ट करते हुए; स्मित- मंद हँसी; भज- स्वीकार करें; सखे– हे मित्र; भवत्- आपकी; किङ्करीः– दासियाँ; स्म– निस्सन्देह; नः– हमको; जल-रुह – कमल; आननम् – मुख वाले; चारु– सुन्दर; दर्शय— कृपा करके दिखाइये ।.

प्रणतदेहिनां(म्) पापकर्शनं(न्),
तृणचरानुगं(म्) श्रीनिकेतनम् ।
फणिफणार्पितं(न्) ते पदाम्बुजं(ङ्),
कृणु कुचेषु नः(ख्) कृन्धि हृच्छयम् ॥ 7॥

प्रणत- आपके शरणागत; देहिनाम्– देहधारी जीवों के; पाप- पाप; कर्षणम्- हटाने वाले; तृण– घास; चर— चरने वाली; अनुगम्—पीछे पीछे चलते हुए; श्री— लक्ष्मीजी के; निकेतनम्- धाम; फणि- सर्प (कालिय) के; फणा - फनों पर; अर्पितम् — रखा; ते—तुम्हारे ; पद - अम्बुजम् — चरणकमल; कृणु— कृपया रखें; कुचेषु- स्तनों पर; नः– हमारे; कृन्धि— काट डालिए; हृत्-शयम्— हमारे हृदय की कामवासना ।

मधुरया गिरा वल्गुवाक्यया,
बुधमनोज्ञया पुष्करेक्षण ।
विधिकरीरिमा वीर मुह्यती-
रधरसीधुनाऽऽप्याययस्व नः ॥ 8॥

मधुरया- मधुर; गिरा- अपनी वाणी से; वल्गु— मोहक; वाक्यया- अपने शब्दों से; बुध- बुद्धिमान को; मनो-ज्ञया- आकर्षक; पुष्कर- कमल; ईक्षण- आँखों वाले; विधि-करीः- दासियाँ; इमाः– ये; वीर—हे वीर; मुह्यतीः – मोहित हो रही; अधर—तुम्हारे होंठों के ; सीधुना– अमृत से; आप्याययस्व - जीवन - दान दीजिये; नः – हमको ।

तव कथामृतं(न्) तप्तजीवनं(ङ्),
कविभिरीडितं(ङ्) कल्मषापहम् ।
श्रवणमङ्गलं(म्) श्रीमदाततं(म्),
भुवि गृणन्ति ते भूरिदा जनाः ॥ 9॥

तव—तुम्हारे; कथा-अमृतम्- शब्दों का अमृत; तप्त- जीवनम्- भौतिक जगत में दुखियारों का जीवन; कविभिः— बड़े बड़े चिन्तकों द्वारा; ईडितम्– वर्णित; कल्मष-अपहम् - पापों को भगाने वाला; श्रवण-मङ्गलम्– सुनने पर आध्यात्मिक लाभ देने वाला; श्रृईमत्–आध्यात्मिक शक्ति से पूर्ण; आततम्- संसारभर में विस्तीर्ण; भुवि- भौतिक जगत में; गृणन्ति- कीर्तन तथा प्रसार करते हैं; ये—जो लोग; भूरि-दाः – अत्यन्त उपकारी; जनाः– व्यक्ति ।

प्रहसितं(म्) प्रिय प्रेमवीक्षणं(वँ),
विहरणं(ञ्) च ते ध्यानमङ्गलम् ।
रहसि संविदो या हृदिस्पृशः(ख्),
कुहक नो मनः क्षोभयन्ति हि ॥ 10॥

प्रहसितम्— हँसना; प्रिय– स्नेहपूर्ण; प्रेम- प्रेमपूर्ण; वीक्षणम्- चितवन; विहरणम्– घनिष्ठ लीलाएँ; च- तथा; ते– तुम्हारी; ध्यान—ध्यान द्वारा; मङ्गलम्– शुभ; रहसि– एकान्त स्थान में; संविदः- वार्तालाप; याः– जो; हृदि– हृदय में; स्पृशः– स्पर्श; कुहक— हे छलिया; नः– हमारे; मनः– मनों को; क्षोभयन्ति- क्षुब्ध करती हैं; हि– निस्सन्देह ।

चलसि यद् व्रजाच्चारयन् पशून्,
नलिनसुन्दरं(न्) नाथ ते पदम् ।
शिलतृणां(ङ्)कुरैः(स्) सीदतीति नः(ख्),

कलिलतां(म्) मनः(ख्) कान्त गच्छति ॥ 11॥

चलसि—जाते हो; यत्— जब; व्रजात्— गोपों के गाँव से; चारयन्- चराने के लिए; पशून्- पशुओं को; नलिन— कमल से भी बढ़कर; सुन्दरम्— सुन्दर; नाथ– हे स्वामी; ते– तुम्हारे; पदम्– चरण; शिल- अन्न के नुकीले सिरों से; तृण– घास; अङ्कुरैः– तथा अंकुरित पौधों से; सीदति– पीड़ा अनुभव करते हैं; इति– ऐसा सोचकर; नः– हमारे; कलिलताम्— बेचैनी; मनः— मन; कान्त— हे प्रियतम; गच्छति- अनुभव करते हैं ।

दिनपरिक्षये नीलकुन्तलैर्-
वनरुहाननं(म्) बिभ्रदावृतम् ।
घनरजस्वलं(न्) दर्शयन् मुहुर्-
मनसि नः(स्) स्मरं(वँ) वीर यच्छसि ॥ 12॥

दिन–दिन के; परिक्षये- अन्त होने पर; नील - नीले; कुन्तलैः– केश गुच्छों से; वन-रुह – कमल; आननम्– मुख; बिभ्रत्— प्रदर्शित करता; आवृतम् — ढका हुआ; घन- मोटा; रजः-वलम्— धूल से सना; दर्शयन्– दिखलाते हुए; मुहुः– बारम्बार; मनसि – मनों में; नः– हमारे ; स्मरम्– कामदेव को; वीर- हे वीर; यच्छसि — रख रहे हो।

प्रणतकामदं(म्) पद्मजार्चितं(न्),
धरणिमण्डनं(न्) ध्येयमापदि ।
चरणपं(ङ्)कजं(म्) शन्तमं(ञ्) च ते,
रमण नः(स्) स्तनेष्वर्पयाधिहन् ॥ 13॥

प्रणत– झुकने वालों की; काम— इच्छाएँ; दम्— पूरी करते हुए; पद्म-ज – ब्रह्मा द्वारा; अर्चितम्— पूजित; धरणि– पृथ्वी के; मण्डनम्— आभूषण; ध्येयम्- ध्यान के पात्र; आपदि- विपत्ति के समय; चरण-पङ्कजम् — चरणकमल; शम्-तमम्- सर्वोच्च तुष्टि प्रदान करने वाले; च- तथा; ते- तुम्हारा; रमण- हे प्रियतम; नः- हमारे; स्तनेषु— स्तनों पर; अर्पय– रखें; अधि-हन्— मानसिक क्लेश को विनाश करने वाले ।

सुरतवर्धनं(म्) शोकनाशनं(म्),
स्वरितवेणुना सुष्ठु चुम्बितम् ।
इतररागविस्मारणं(न्) नृणां(वँ),
वितर वीर नस्तेऽधरामृतम् ॥ 14॥

सुरत– माधुर्य सुख; वर्धनम्— बढ़ाने वाले; शोक– शोक; नाशनम्— विनष्ट करने वाले; स्वरित– ध्वनि की गई; वेणुना- आपकी वंशी द्वारा; सुष्ठु– अत्यधिक; चुम्बितम्- चुम्बन किया हुआ; इतर- अन्य; राग- आसक्ति; विस्मारणम्– विस्मरण कराने वाले; नृणाम्— मनुष्यों के; वितर- कृपया वितरण कीजिये; वीर– हे वीर; नः– हम पर; ते– तुम्हारे; अधर- अधरों के; अमृतम्- अमृत को ।

अटति यद् भवानह्नि काननं(न्),

त्रुटिर्युगायते त्वामपश्यताम् ।
कुटिलकुन्तलं(म्) श्रीमुखं(ञ्) च ते,
जड उदीक्षतां(म्) पक्ष्मकृद् दृशाम् ॥ 15॥

अटति– घूमते हो; यत्— जब; भवान्– आप; अह्नि- दिन में; काननम्— जंगल में; त्रुटि– लगभग1/1700 सेकंड; युगायते- एक युग के बराबर हो जाता है; त्वाम्– तुम; अपश्यताम्— न देखने वालों के लिए; कुटिल- घुँघराले; कुन्तलम्— बालों का गुच्छा; श्री— सुन्दर; मुखम्— मुँह; च– तथा; ते– तुम्हारा; जडः– मूर्ख; उदीक्षताम्- उत्सुकता से देखने वालों को; पक्ष्म–पलकों का; कृत् — बनाने वाला; दृशाम्– आँखों का ।.

पतिसुतान्वयभ्रातृबान्धवा-
नतिविलङ्घ्य तेऽन्त्यच्युतागताः ।
गतिविदस्तवोद्गीतमोहिताः(ख्),
कितव योषितः(ख्) कस्त्यजेन्निशि ॥ 16॥

पति– पति; सुत– बालक; अन्वय- पूर्वज; भ्रातृ- भाई; बान्धवान्- तथा अन्य सम्बन्धियों को; अतिविलङ्घ्य- पूर्णतया उपेक्षा करके; ते — तुम्हारी; अन्ति- उपस्थिति में; अच्युत- हे अच्युत; आगताः- आई हुई; गति- हमारी चालढाल का; विदः- प्रयोजन को जानने वाले; तव- तुम्हारा; उद्गीत- तेज गीत से; मोहिताः- मोहित; कितव– हे छलिया; योषितः— स्त्रियों को; कः - कौन; त्यजेत्— त्याग करेगा; निशि – रात में ।

रहसि सं(वँ)विदं(म्) हृच्छयोदयं(म्),
प्रहसिताननं(म्) प्रेमवीक्षणम् ।
बृहदुरः(श्) श्रियो वीक्ष्य धाम ते,
मुहुरतिस्पृहा मुह्यते मनः ॥ 17॥

रहसि— एकान्त में; संविदम्— गुप्त वार्ताएँ; हृत्-शय- हृदय में कामेच्छा का; उदयम्— उठना; प्रहसित- हँसता हुआ; आननम्- मुख; प्रेम- प्रेमपूर्ण; वीक्षणम्- चितवन; बृहत्- चौड़ी; उरः– छाती; श्रियः- लक्ष्मी; वीक्ष्य– देखकर; धाम- धाम; ते- तुम्हारा; मुहुः- बारम्बार; अति– अत्यधिक; स्पृहा- लालसा; मुह्यते - मोह लेती है; मनः– मन को ।

व्रजवनौकसां(वँ) व्यक्तिरङ्ग ते,
वृजिनहन्त्र्यलं(वँ) विश्वमङ्गलम् ।
त्यज मनाक् च नस्त्वत्स्पृहात्मनां(म्),
स्वजनहृद्रुजां(यँ) यन्निषूदनम् ॥ 18॥

व्रज-वन-व्रज के जंगलों में; ओकसाम्— निवासियों के लिए; व्यक्तिः- प्राकट्य; अङ्ग– हे प्रिय; ते– तुम्हारा; वृजिन – दुख का; हन्त्री– विनाश करने वाला; अलम्- बहुत हो गया, बस; विश्व-मङ्गलम् — मंगलमय ; त्यज - छोड़ दीजिये ; मनाक् - थोड़ा; च—तथा; नः– हमको; त्वत् – तुम्हारे लिए; स्पृहा– लालसा; आत्मनाम्– पूरित मनों वाले; स्व– अपने; जन- भक्तगण; हृत्– हृदयों में; रुजाम्— रोग का; यत्– जो; निषूदनम्— शमन करने वाला ।

यत्ते सुजातचरणाम्बुरुहं(म्) स्तनेषु,

भीताः(श्) शनैः(फ्) प्रिय दधीमहि कर्कशेषु ।

तेनाटवीमटसि तद् व्यथते न किंस्वित्,

कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवदायुषां(न्) नः ॥ 19॥

यत्—जो; ते—तुम्हारे; सु-जात–अतीव सुन्दर; चरण-अम्बु-रुहम्— चरणकमल को; स्तनेषु– स्तनों पर; भीताः– भयभीत होने से; शनैः- धीरे धीरे; प्रिय- हे प्रिय; दधीमहि- हम रखती हैं; कर्कशेषु– कर्कश; तेन— उनसे ; अटवीम्— जंगल में; अटसि—आप घूमते हैं; तत्— वे; व्यथते– दुखते हैं; न– नहीं; किम् स्वित्- हम आश्चर्य करती हैं; कूर्प- आदिभिः– छोटे कंकड़ों आदि से; भ्रमति— घूम जाता है; धीः- मन; भवत्-आयुषाम्— उन लोगों के लिए जिनके प्राण भगवान् हैं; नः- हमारा ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहं(म्)स्यां(म्) सं(म्)हितायां(न्)

दशमस्कन्धे पूर्वार्धे रासक्रीडायां(ङ्) गोपीगीतं(न्) नामैकत्रिं(म्)शोऽध्यायः ॥